डॉ० संदीप कुमार
इतिहास विभाग

भारत सरकार अधिनियम – 1935

1935 ई० का भारत सरकार अधिनियम भारतीय संवैधानिक विकास के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। 1919 ई० के बाद पास होने वाला यह प्रथम महत्वपूर्ण अधिनियम था। 1919 ई० 1935 ई० तक राजनीतिक स्थिति में बहुत परिवर्तन आ चुका था। परिवर्तन का आरम्भ गाँधी द्वारा 1920 ई० में असहयोग आन्दोलन चलाकर किया गया। 1922 ई० में गाँधी ने असहयोग आन्दोलन को अचानक स्थगित कर दिया। गाँधी के इस निर्णय से लोगों में घोर निराशा फैली। इसके बाद करीब पाँच वर्ष तक आन्दोलन गतिहीन पड़ा रहा। राष्ट्रीय आन्दोलन के इस गतिहीनता के काल में स्वराज दल का उदय हुआ। स्वराज दल ने अपने प्रयासों से जनता में राष्ट्रीयता की ज्योति को बुझने नहीं दिया। विधान मंडल में सरकार का विरोध करके तथा उसके मार्ग में बाधायें उपस्थित करके स्वराज दल ने राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत रखने का प्रयास किया। लेकिन स्वराजवाद का यह प्रयोग अल्पकाल में ही असफल हो गया।

राष्ट्रीय आन्दोलन की इस पस्ती के काल में साम्प्रदायिक झगड़ों की जहरीली हवा देश में फिर से बहने लगी। मुसलिम लीग ने फिर अपने आपको कांग्रेस से अलग कर लिया। इसके जवाब में हिन्दू महासभा भी संकुचित और प्रतिक्रियावादी ढंग का प्रचार करने लगी।

राजनीतिक दृष्टि से इस युग में कांग्रेस में वामपंथ का प्रभाव बढ़ने लगा। इस पंथ के नेता थे जवाहरलाल नेहरू और सुभाष चंद्र बोस। इन नेताओं ने राष्ट्रीय आन्दोलन में किसान और मजदूर वर्ग के महत्व को अनुभव किया। समाजवादी विचारधारा का इन पर काफी प्रभाव था। 1927 ई० में नेहरू सोवियत रूस की यात्रा पर भी गये और वे वहाँ की व्यवस्था से काफी प्रभावित होकर लौटे। विद्यार्थियों और युवा वर्ग में नेहरू और बोस के विचार का स्वागत होने लगा। सारे देश में युवा संघ और विद्यार्थी संगठन कायम होने लगे। साम्यवादी दल की स्थापना भी हो चुकी थी। उसके नेतृत्व में मजदूर और किसानों में अभूतपूर्व जागृति आ रही थी। सरकार इससे बहुत चिन्तित थी और इस कारण उसने सभी प्रमुख साम्यवादी नेताओं को जेल में डाल दिया। फिर भी किसान-मजदूर सक्रिय रहे। उत्तर प्रदेश में किसानों ने आन्दोलन चलाया। 1928 ई० के बाद से मजदूर-हड़तालों का तो ताँता लग गया। रेलवे मजदूर, टाटा फैक्टरी के मजदूरों तथा सूती वस्त्र उद्योग में भी मजदूरों ने हड़ताल की। साइमन कमीशन की घोषणा और उसमें सभी सदस्य अंग्रेज होने की वजह से कांग्रेस को एक ऐसा अवसर मिल गया जिसकी उन्हें काफी दिनों से प्रतीक्षा थी। इसने राष्ट्रीय चेतना जगाने में चिनगारी का काम किया। एक तरफ तो कांग्रेस ने चुनौती के रूप में सर्वदलीय सम्मेलन बुलाकर स्वतंत्र भारत का संविधान तैयार करने के लिये मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक कमीशन का गठन किया, दूसरी ओर राष्ट्र का

मुसलमानों को उनकी संख्या से अधिक प्रतिनिधित्व दिया गया।

संघीय न्यायालय → अधिनियम में यह व्यवस्था की गई कि केन्द्र में संघ की इकाईयों के आपसी झगड़ों और केन्द्र तथा इकाईयों के झगड़ों का निपटारा करने के लिये एक संघीय न्यायालय होगा। इसको 1935 ई० के अधिनियम की व्याख्या करने का अधिकार दिया गया, परन्तु यह भारत के लिये उच्चतम न्यायालय नहीं था। अपील की अंतिम न्यायालय प्रिवी कौन्सिल थी।

बर्मा, बरार व अदन → बर्मा को भारत से अलग कर दिया गया। अदन को भारत सरकार के नियंत्रण से मुक्त करके इंग्लैंड के उपनिवेश विभाग के अधीन रखा गया। प्रशासन के लिये बरार को मध्य प्रान्त का अंग बना दिया गया।

गृह सरकार में परिवर्तन → 1935 ई० के अधिनियम ने गृह सरकार में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये। जिन विषयों में गवर्नर अपने मंत्रियों की सलाह से कार्य करता था, उन पर से भारत सचिव का नियंत्रण हट गया। इंडिया कौन्सिल का अंत कर दिया गया और इसके स्थान पर कुछ परामर्शदाताओं की नियुक्ति की व्यवस्था की गई।

संरक्षण और आरक्षण → संरक्षण और आरक्षण 1935 ई० के अधिनियम का एक बहुत महत्वपूर्ण अंग था। ये उतने ही महत्वपूर्ण थे जितनी कि संघ तथा प्रांतीय स्वायत्तता की योजनायें महत्वपूर्ण थीं। इस अधिनियम के अंतर्गत गवर्नर जनरल को कुछ विशेष उत्तरदायित्व सौंपे गये थे जैसे अल्पमतों, सार्वजनिक सेवाओं, देशी रियासतों के शासकों तथा अंग्रेजों के आर्थिक हितों की सुरक्षा, भारत में सुरक्षा, शांति एवं व्यवस्था कायम रखना आदि। इन उत्तरदायित्वों को पूरा करने के गवर्नरों तथा गवर्नर जनरल को कुछ विशेष शक्तियाँ भी सौंपी गई थीं। इन्हीं शक्तियों को "संरक्षण और आरक्षण" कहा जाता है। इनके द्वारा एक ओर विधान मंडल की शक्तियों पर अनेक सीमायें लगी हुई थीं, दूसरी ओर गवर्नरों तथा गवर्नर जनरलों को मनमाने ढंग से कार्य करने का अधिकार था। आपात-काल में तो सम्पूर्ण शासन की बागडोर ही इनके हाथ में आ जाती थी।

निस्संदेह भारत के लिये संघ की आवश्यकता थी, जिसका स्वागत किया जाता था। परन्तु इसमें बहुत अधिक त्रुटियों के कारण भारतीयों ने इसे एक स्वर से अस्वीकार कर दिया। कांग्रेस, हिन्दू महासभा, मुस्लिम लीग तथा अकाली पार्टी ने इसका जोरदार विरोध किया। इसके विषय में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "भारतीय स्वायत्तता और संघीय ढाँचे की इस अधिनियम में व्यवस्था की गई है परन्तु इसमें इतने अधिक संरक्षण तथा नियंत्रण हैं कि देश की राजनीतिक और आर्थिक शक्ति ब्रिटिश सरकार के हाथों में केन्द्रित बनी रहेगी। संघीय ढाँचा ऐसा था कि इसके अंतर्गत कोई भी प्रगति असम्भव हो जाती। यह इतना अधिक प्रतिक्रियावादी था कि इसमें स्वतंत्रता का बीज तक नहीं था।"

- लिखित थी :—

लंबा प्रलेख → 1935 ई० का अधिनियम काफी लम्बा और जटिल था। इसमें 321 धाराएँ और 10 परिशिष्ट थे। अधिनियम में केवल मूल सिद्धान्तों को ही निर्धारित न करके, शासन-संबंधी प्रायः सभी बातों का विस्तृत विवरण दिया गया था।

प्रस्तावना का अभाव → इस अधिनियम को बिना प्रस्तावना के पास किया गया था। 1935 ई० के अधिनियम के लक्ष्य के संबंध में किसी नई नीति की घोषणा नहीं की गई। 1919 ई० के अधिनियम की प्रस्तावना को ही 1935 ई० के अधिनियम के साथ जोड़ दिया गया। इसमें पूर्ण स्वराज्य या औपनिवेशिक स्वराज्य के बारे में कोई आश्वासन नहीं दिया गया था।

केन्द्र में दोहरा शासन → 1935 ई० के अधिनियम के अन्तर्गत केन्द्र में दोहरे शासन की व्यवस्था की गई। यह मूल रूप में 1919 ई० के प्रान्तीय द्वैध शासन की भाँति ही था। संघीय विषयों को दो भागों में बाँटा गया - संरक्षित और हस्तांतरित। संरक्षित विषय थे - प्रतिरक्षा, विदेशी मामले, कबीलों के मामले तथा गिरजाघर-संबंधी मामले। इन विषयों का प्रशासन गवर्नर जनरल उन सभासदों की सहायता से करता था, जो संघीय व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं थे। हस्तांतरित विषयों का प्रशासन गवर्नर जनरल तथा मंत्रियों को सौंपा गया था। मंत्री विधानमंडल के सदस्यों में से चुने जाते थे और उसके प्रति उत्तरदायी थे।

अखिल भारतीय संघ → 1935 ई० के अधिनियम के अन्तर्गत एक अखिल भारतीय संघ की स्थापना की योजना रखी गई। इस संघ का निर्माण ब्रिटिश भारतीय प्रांतों, चीफ कमिश्नर प्रान्तों तथा देशी रियासतों से मिलकर होना था।

प्रांतीय स्वायत्तता → 1935 ई० के अधिनियम की सबसे बड़ी विशेषता प्रान्तीय स्वायत्तता की स्थापना थी। इसके द्वारा प्रान्तों में दोहरे शासन का अंत कर दिया गया और उसके स्थान पर पूर्ण उत्तरदायी शासन की स्थापना की गई।

विधान मंडलों का विस्तार → 1935 ई० के अधिनियम के अंतर्गत प्रांतीय विधान मंडलों का विस्तार किया गया। प्रान्तों में ग्यारह में से छह विधानमंडलों के दो सदनों की व्यवस्था की गई। केन्द्रीय विधानमंडल के सदस्यों की संख्या में भी वृद्धि की गई।

मताधिकार का विस्तार, साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धति को कायम रखना → 1935 ई० के अधिनियम के अंतर्गत मताधिकार का विस्तार किया गया। प्रांतों के लिये करीब ग्यारह प्रतिशत जनता को मतदान करने का अधिकार दिया गया। साम्प्रदायिक चुनाव-प्रणाली देश व राष्ट्रहित के लिये घातक थी, परन्तु फिर भी अंग्रेजों ने न केवल इसे कायम रखा, बल्कि इसका और अधिक विस्तार किया। हरिजनों के लिये भी अंग्रेजों ने न केवल इसे कायम रखा, बल्कि इसका और अधिक विस्तार किया। हरिजनों के लिये भी साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धति को अपनाया गया

आह्वान किया कि वह साइमन कमीशन द्वारा किये गये उपहास के विरोध में जमकर आन्दोलन करे।

1929 ई० में नेहरू रिपोर्ट रखी गई। इस रिपोर्ट के अंतर्गत लक्ष्य औपनिवेशिक स्वराज्य रखा गया। जनता को मौलिक अधिकार दिये जाने, संघीय शासन की स्थापना तथा साम्प्रदायिक चुनाव के समाप्त किये जाने की माँग की गई। मुस्लिम लीग ने नेहरू रिपोर्ट को अस्वीकार कर दिया। सरकार ने भी इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। स्वयं कांग्रेस में नेहरू रिपोर्ट के ऊपर मतभेद था। 1929 ई० के अधिवेशन में कांग्रेस ने इस रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया तथा यह प्रस्ताव पास किया कि अगर सरकार एक वर्ष के अन्दर इस रिपोर्ट को स्वीकार नहीं कर लेती तो कांग्रेस आन्दोलन संगठित करेगी। इस प्रकार 1928 ई० के आते-आते भारतीय राजनीति में काफी सरगर्मी आ गई थी। इस काल में एक बार फिर से आतंकवाद का प्रादुर्भाव हुआ। आतंकवादी भी समाजवादी विचारधारा से प्रभावित थे। दिसम्बर, 1928 ई० के अधिवेशन में कांग्रेस द्वारा पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास कर दिया गया। कांग्रेस ने "सविनय अवज्ञा आन्दोलन" चलाने का निश्चय किया।

6 अप्रैल, 1930 ई० को दांडी में नमक कानून को तोड़कर गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारम्भ कर दिया। आन्दोलन में जनता ने अभूतपूर्व उत्साह के साथ भाग लिया। स्वयं सरकार आन्दोलन की प्रगति से घबरा गई थी। सरकार की दमनकारी नीतियों के बावजूद आन्दोलन 1934 ई० तक चलता रहा। इसी बीच में 1933 ई० में बम्बई में भारतीय समाजवादी पार्टी कायम की गई। अक्टूबर 1934 ई० में यह पार्टी अखिल भारतीय पार्टी के रूप में सामने आई और इसे कांग्रेस समाजवादी पार्टी का नाम दिया गया। इस दल के सम्मेलन में समाजवादी कार्यक्रम (जैसे मुख्य उद्योगों का राष्ट्रीयकरण, जमीन्दारी प्रथा की समाप्ति आर्थिक क्षेत्र में राज्य का नियंत्रण आदि) निर्धारित किया गया। अनेक दक्षिणपंथी नेता इस समाजवादी दल के विरोधी थे, फलतः कांग्रेस में ही मतभेद पैदा होने लगा।

इस प्रकार 1935 ई० के आते-आते विभाजन की प्रक्रिया करीब-करीब पूरी हो चुकी थी। हिन्दु-मुसलमानों में मतभेद था। कांग्रेस वामपंथियों और दक्षिणपंथियों के बीच मतभेद था। सरकार अपनी नीतियों द्वारा इस मतभेद को और तीव्र करने की चेष्टा कर ली थी। 1932 ई० का मैकडोनाल्ड का साम्प्रदायिक निर्णय इसी का परिणाम था। इसके द्वारा न केवल मुसलमानों बल्कि सिक्खों, ईसाईयों तथा हरिजनों को भी पृथक प्रतिनिधित्व का अधिकार दिया गया। स्त्रियों के लिये व्यवस्थापिका सभा में तीस प्रतिशत स्थान सुरक्षित किये गये।

इस प्रकार से ऐसी परिस्थितियों ने मिलकर 1935 ई० के भारत सरकार अधिनियम को जन्म दिया। जिसकी मुख्य बातें निम्न-